1.0 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप,

- भाषा के स्वरूप से परिचित हो जाएँगे।
- भाषा के अभिलक्षण बता पाएँगे।
- मानवीय और मानवेत्तर भाषा के बीच के अंतर को समझ पाएँगे।
- भाषा के विभिन्न रूपों से परिचित हो जाएँगे।
- भाषाओं का वर्गीकरण बता पाएँगे।

1.1 प्रस्तावना :

भाषा विज्ञान के अध्ययन में भाषा का अध्ययन अहम विषय है इसलिए इस इकाई में भाषा के स्वरूप, भाषा के अभिलक्षण भाषा के विविध रूप जिनमें उपबोली से लेकर मिश्रित भाषा तक अर्थात अधिक से अधिक रूपों पर प्रकाश डाला जाएगा। साथही भाषा विज्ञान का अध्ययन करनेवाले छात्रों को इसका गहरा ज्ञान होना जरूरी है। मनुष्य का जीवन भाषा के बिना अधूरा है। भाषा के अभाव में वह गूंगा है। इस विशाल धरती पर किसी भी भूभाग पर बसे मनुष्य को भाषा की जरूरत है। भिन्न-भिन्न भूप्रदेश में बसे इन लोगों की भाषा में नदी, पहाड, रेगिस्तान, जंगल, आबोहवा आदि के कारण भिन्नता है। भिन्नता के कारण भाषाओं का वर्गीकरण करके उनका अध्ययन करना जरूरी होता है। उन भाषाओं का आकृतिमूलक और पारिवारिक वर्गीकरण करके उसका स्पष्टिकरण करने का प्रयास भी किया गया है। इससे भाषा का स्वरूप, अभिलक्षण, रूप और वर्गीकरण पर प्रकाश डालना संभव होगा।

1.2 विषय विवरण :

भाषा तथा भाषा के विभिन्न रूप :

हम अपने भावों को व्यक्त करने के लिए एक सार्थक मौलिक साधन को अपनाना चाहते हैं और वह साधन भाषा है। स्थूल रूप से अन्य प्राणियों को जीवनयापन करने भाषा की जरूरत नहीं पडत सकती फिर भी वे सभी प्राणी किसी न किसी प्रकार के संकेतों के सहारे अपने भाव व्यक्त करते हैं। मगर मनुष्य प्राणी अन्य प्राणियों की तुलना में बुद्धि की वजह से श्रेष्ठ माना जाता है। दिन-ब-दिन विकसित होते मनुष्य प्राणी को अपने भावों को सूक्ष्म और स्पष्ट रूप में व्यक्त करने का साधन भाषा ही है। भाषा ही मनुष्य-मनुष्य के बीच का फासला कम करती है अर्थात मनुष्य को जोडने का काम भाषा करती है। उस भाषा के कई रूप भी हैं।

1.2.1 भाषा : स्वरूप

मनुष्य, समाज में रहते हुए वह एक दूसरे से परस्पर व्यवहार करता है। परस्पर व्यवहार के जितने साधन है उनमें विचारों की अभिव्यक्ति, प्रधान साधन है। विचारों की अभिव्यक्ति के लिए वह कई माध्यमों का सहारा लेता है। अपने विचारों को कभी वह संकेतों से व्यक्त करता है, कभी रंगों से, कभी झंडियों से तो कभी विशिष्ट प्रकार की ध्वनियों से। अर्थात अपने भाव या विचार व्यक्त करने के कई साधन है। मनुष्य भावाभिव्यक्ति के लिए इनमें से किसी

भी साधन का प्रयोग करके अपना काम चला लेता है। हम किसी वस्तु के विषय में परस्पर विचार विनिमय कर सकते है। फिर स्फुट शब्द स्पर्श, करतल ध्वनि, सीटी बजाना, विशिष्ट ध्वनि निकालना, हाथ हिलाना, आँख मारना, चुटकी बजाना, पास बुलाना, दाएँ-बाएँ हटना, जिव्हा दिखाना, खाँसना, उँगली दिखाना आदि न जाने कितने ऐसे साधन है उनके द्वारा हमारे विचार विनिमय का कार्य संपन्न हो जाता है। यानी यह सभी भाषा है केवल साधन अलग है।

'भाषा' शब्द में व्यापकता है। विचार विनिमय के विभिन्न साधनों को देखते हुए भाषा के व्यापक तथा संकुचित (सीमित) अर्थ को ज्ञात करना हमारा फर्ज बनता है। वास्तव में हम पाँचों ज्ञान इंद्रियों द्वारा भी अपनी बात रख सकते है, व्यक्त करते हैं समझ सकते हैं।

1) गंध इंद्रिय (गंध ज्ञान) गंधग्राह्य
2) स्वाद इंद्रिय (स्वाद ज्ञान) स्वादग्राह्य
3) स्पर्श इंद्रिय (स्पर्श ज्ञान) स्पर्शग्राह्य
4) दृग इंद्रिय (नेत्र ज्ञान) नेत्रग्राह्य
5) कर्णइंद्रिय (श्रवण ज्ञान) श्रवणग्राह्य

इन्हें हम व्यापक अर्थ में रख सकते है किंतु इनमें से प्रमुख तीन ऐसे है जिनसे विचार व्यक्त किए जा सकते हैं।

1) स्पर्शज्ञान : इसमें मनुष्य अपने विचारों, भावों को संघर्ष के माध्यम से व्यक्त करता है। उदा. हाथ या पैर को स्पर्श करना। चोर सामने पुलिस को देखकर अपने साथी-मित्र को स्पर्श करता है। उसका हाथ दबाता है और खतरे का संदेश देता है। इसे स्पर्शग्राह्य भी कहते है।

2) नेत्रज्ञान : इसमें संकेतो के द्वारा एक मनुष्य दूसरे तक अपनी बात पहुँचा देता है। नेत्र, आँखें इन संकेतों को ग्रहण करती है। बातें नेत्रो से ज्ञात होती है इसीकारण इसे नेत्रज्ञान या नेत्रग्राह्य भी कहते है। चौराहे पर ही हरी, लाल बत्ती जलना और हरी बत्ती का संकेत जाना या गमन करना है। या लालबत्ती के जलने का संकेत है, ठहरना।

3) श्रवणज्ञान / श्रवणग्राहा : इसमें मुख से, हाथ से, या किसी वस्तु से विविध ध्वनियाँ निकालकर विचारों या भावों को प्रकट किया जा सकता है। श्रवणग्राह्य के अंदर वे समस्त ध्वनियाँ आ जाती है जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को व्यक्त करता है। ध्वनि संदेश द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक बात पहुँचायी जाती है।

संकुचित या सीमित अर्थ में ध्वनिचिन्हों की भाषा अर्थात विचार विनिमय के लिए उच्चारण अवयवों से (मुख से उच्चारित) सार्थक ध्वनिचिन्हों की भाषा को प्राथमिकता दी है। सार्थक शब्दों को इसके अंतर्गत रखा जाता है जो भाषावैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होती है, इसमें अतिव्याप्ति नहीं होती।

अभिप्राय व्यक्त करने आँख, सिर, हाट आदि का संचालन एक प्रकार की भाषा है किंतु इससे अर्थपूर्ण नहीं होता। अर्थात केवल इंगित या ध्वनियों की सहायता से भाषा पूर्ण नहीं होती। ध्वनिचिह्नों की सहायता के लिए इंगित की जरूरत है। ध्वनि चिह्नों के अलावा विचार विनिमय के अन्य चिह्न भी है। मनुष्य अपने विचारों को दो रूपों में प्रकट कर सकता है - मौखिक और लिखित। इनमें से मौखिक रूप अधिक चलता है। लेकिन मौखिक की तुलना में

ध्वनि संकेत की भाषा अर्थपूर्ण होती है। फिर भी इतना सच है कि भाव प्रकट करने के सभी साधनों का प्रयोग मनुष्य आज भी कर रहा है।

'भाषा' शब्द संस्कृत के 'भाष्' धातु से बना हुआ है। जिसका अर्थ है 'व्यक्तवाणी'। अत: एक प्रकार से इस धातु के अर्थ में ही भाषा का लक्षण विद्यमान है। अर्थात जिससे कुछ बोला या कहा जाय वह भाषा है। जिसमें पशु-पक्षियों से लेकर मनुष्य तक कुछ न कुछ वाणी प्रकट करने की बात है। विचारों को व्यक्त करने के साधनों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1) भाषेतर

2) भाषा

जितने प्रकार के संकेत है उन्हें हम भाषेतर अभिव्यक्ति के अंतर्गत रख सकते हैं। इन्हें भाषा के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता। परस्पर व्यवहार के लिए इन संकेता का अधिक उपयोग नहीं होता । बहुत सीमित मात्रा में इनका उपयोग होता है।

व्यापक स्तर पर परस्पर व्यवहार के लिए जिस साधन का उपयोग समाज करता है उसे भाषा कहते हैं।

भाषा से तात्पर्य मानव मस्तिष्क की उस प्रक्रिया से है, जिसके अन्तर्गत वक्ता अपने कतिपय ध्वनि यंत्रोद्वारा नाना प्रकार की ध्वनियों का उच्चारण कर अपने भावों तथा विचारों का प्रकाशन करता है। अर्थात, भाषा में प्रयुक्त ध्वनि मनुष्य की वागेन्द्रियों से ही नि:सृत होती है। वागेन्द्रियों द्वारा उत्पन्न ध्वनि सार्थक होती है, यादृच्छिक होती है।

भाषा एक सीमित समुदाय की होती है इसीकारण दूसरे समुदाय में दूसरी भाषा का प्रयोग होता है। हर भाषा में एक निश्चित प्रकार की व्यवस्था होती है। यह व्यवस्था ध्वनि, शब्द और वाक्य तीन स्तरों पर होती है। इससे स्पष्ट होता है, भाषा के लिए उसके ध्वनि समूहों की एक निश्चित व्यवस्था हो।

संस्कृत की 'भाष्' धातु से बने 'भाषा' शब्द के जो अर्थ प्राप्त होते हैं, उसके आधारपर ही भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा को परिभाषित करने का प्रयास किया है। भाषा विज्ञान में उसी भाषा का स्वीकार किया जा सकता है जो वक्ता के वक्तव्य को पूर्णता और स्पष्टता से संप्रेषित कर सके। भाषा के स्वरूप को देखकर देश-विदेश के अनेक विद्वानों ने श्रवणग्राह्य प्रतीक को महत्त्व दिया है और भाषा को परिभाषाबद्ध किया है। कुछ मत निम्न शब्दों में दिए जा सकते हैं -

भाषा की परिभाषाएँ :

गरिमा श्रीवास्तव की 'भाषा और भाषा विज्ञान' पुस्तक में प्राप्त संस्कृत आचार्यो द्वारा दी गई भाषा की परिभाषाएँ इस प्रकार है - न्यायशास्त्र के अनुसार -

तदेव हि लक्षणं यदव्याप्ति-अतिव्याप्ति
असंभव-दोषत्रय शून्यम।

इस परिभाषा में सलाह दी है कि परिभाषा बनाते समय अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव जैसे दोषों से बचना जरूरी है।

आचार्य **कपिल** ने कहा है -

स्फुटवाक्करणोपातो, भावाभिव्यक्तिसाधक:
संकेतितो ध्वनिव्रात: सा भाषेत्युच्यतेबुधै:।।

भृतहरि के अनुसार -

''शब्द कारणमर्थस्य स हि तेनोपजायते''

अमरकोष में कहा गया है -

''ब्राह्म तु भारती भाषा गीर् वाक् वाणी सरस्वती।''

सुकुमार सेन के अनुसार -

''अर्थवाण कंडोद्गीर्ण - ध्वनि-समष्टि ही भाषा है।''

आधुनिक भाषावैज्ञानिकों ने भाषा की परिभाषाएँ अपनी-अपनी पद्धति से इस प्रकार दी है। भारत भूषण चौधरी की पुस्तक 'संरचनात्मक **भाषा-विज्ञान** में प्राप्त परिभाषाएँ' इस प्रकार -

क्षीर स्वामी - ''जो भाषित की जाती है अर्थात व्यक्त वर्णों के रूप में बोली जाती है उसे भाषा कहते है।''

कामताप्रसाद गुरू - ''भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भलीभाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।''

पतंजलि - ''जो वाणी में वर्णों के माध्यम से व्यक्त होते है, वे ही व्यक्त वाक् (भाषा) हैं।''

डॉ. पांडुरंग दामोदर गुणे - ''अपने व्यापक अर्थ में भाषा के अन्तर्गत विचारों और भावों को सूचित करनेवाले वे सारे संकेत आते हैं, जो देखे या सुने जा सके और इच्छानुसार उत्पन्न किए एवं दोहराए जा सकें।''

श्यामसुन्दर दास - ''विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों के व्यवहार को भाषा कहते है।''

डॉ. बाबूराम सक्सेना - ''जिन ध्वनिचिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है उनको समष्टि रूप से भाषा कहते है।''

आचार्य डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा - ''जिनकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग करते हैं उस यादृच्छिक, रूढ़, ध्वनि-संकेत की प्रणाली को भाषा कहते है।''

सरयूप्रसाद अग्रवाल - ''भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छन्द प्रतीकों की वह रीतिबद्ध पद्धति है जिससे मानव-समाज अपने भावों का परस्पर आदान-प्रदान करते हुए एक दूसरे को सहयोग देता है।''

डॉ. देवीशंकर द्विवेदी - ''भाषा यादृच्छिक वाक्प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से मानव-समुदाय परस्पर व्यवहार करता है।''

गरिमा श्रीवास्तव की पुस्तक में भाषा की परिभाषाएँ इस प्रकार मिलती है -

आचार्य किशोरीप्रसाद वाजपेयी - ''विभिन्न अर्थो में सांकेतिक शब्द समूह ही भाषा है। जिसके द्‌वारा हम अपने विचार या मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी - ''भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित मूलत: प्राय: यादृच्छिक ध्वनि प्रतिकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्‌वारा किसी भाषा समाज के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।''

डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव - ''भाषा वागेन्द्रिय द्‌वारा विस्तृत उन ध्वनि प्रतीकों की संरचनात्मक व्यवस्था है जो अपनी मूलप्रकृति में यादृच्छिक एवं रूढ़िपरक होते हैं और जिसके द्‌वारा किसी भाषा समुदाय के व्यक्ति अपने अनुभवों को व्यक्त करते हैं, अपने विचारों को सम्प्रेषित करते हैं और अपनी सामाजिक अस्मिता पद तथा अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों को सूचित करते हैं।''

जिस तरह भारतीय भाषावैज्ञानिकों ने भाषा को परिभाषित किया है वैसे पाश्चात्य भाषावैज्ञानिकों का प्रयास भी अत्यन्त सराहनीय रहा है। उन्होंने दी हुई परिभाषाओं पर भी हम विचार करेंगे।

गरिमा श्रीवास्तव की पुस्तक 'भाषा और भाषाविज्ञान' में प्राप्त परिभाषाएँ -

प्लेटो ने सोफिस्ट में लिखा है - ''विचार आत्मा की मूक या ध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वह जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।''

स्वीट के अनुसार - ''ध्वन्यात्मक शब्दोंद्‌वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।''

जेस्परसन के अनुसार - ''मनुष्य ध्वन्यात्मक शब्दों द्‌वारा अपने विचार प्रकट करता है। मानव मस्तिष्क वस्तुत: विचार प्रकट करने के लिए ऐसे शब्दों का निरन्तर उपयोग करता है। इस प्रकार कार्य-कलाप को भाषा की संज्ञा दी जाती है।''

वेन्द्रिय - ''भाषा एक तरह का संकेत है, संकेत से आशय उन प्रतीकों से है, जिनके द्‌वारा मानव अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, कर्णग्राह्य और स्पर्शग्राह्य, वस्तुत: भाषा की दृष्टि से कर्णग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।''

ए. एच. गार्डीनर के अनुसार - "The common defination of speech is the use of articulate sound symbols for the expression of thought." अर्थात ''विचारों की अभिव्यक्ति के लिए जिन व्यक्त एवं स्पष्ट संकेतों का व्यवहार किया जाता है, उनके समूह को भाषा कहते हैं।''

मैक्समूलर के अनुसार - ''भाषा और कुछ नहीं है केवल मानव की चतुर बुद्‌धिद्‌वारा आविष्कृत ऐसा उपाय है जिसकी मदद से हम अपने विचार सरलता और तत्परता से दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं और चाहते है कि इसकी व्याख्या प्रकृति की उपज के रूप में नहीं बल्कि मनुष्य कृत पदार्थ के रूप में करना उचित है।''

भारत भूषण चौधरी की पुस्तक 'सरचनात्मक भाषाविज्ञान' में प्राप्त आधुनिक पाश्चात्य भाषा शास्त्रियों की भाषा की परिभाषाएँ -

ब्लॉक और ट्रेगर - "A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a society group co-operate." (भाषा यादृच्छिक ध्वनि-संकेतों की वह व्यवस्था है, जिसके सहारे कोई समाज परस्पर व्यवहार करता है।)

मेरिओ ए. पेइ और फ्रैंक गेनर - "The language is system of communication by sound, i.e. through the organs of speech and hearing, among human-beings of certain group of community, using vocal symbols possessing arbitrary conventional meanings." (मनुष्यों के वर्ग विशेष में आपसी व्यवहार के लिए प्रयुक्त वे ध्वनि-संकेत जिनका अर्थ पूर्व निर्धारित एवं परम्परागत है तथा जिनका आदान-प्रदान जीभ और कान के माध्यम से होता है भाषा कहलाते हैं।

एन साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका - "Language may be defined as an arbitrary system of Vocal symbols by means of which human beings as members of a social group & Participants in culture interact and communicate." (भाषा व्यक्त ध्वनिचिन्हों की उस पद्धत्ति को कहते है जिसके माध्यम से प्रत्येक समाज का मानव-सदस्य और सांस्कृतिक सहभागी पारस्परिक व्यवहार एवं विचारों का आदान प्रदान करते हैं।)

भोलानाथ तिवारी की पुस्तक भाषाविज्ञान में प्राप्त पाश्चात्य परिभाषाएँ -

स्त्रुत्वा - "A language is system of arbitrary vocal symbols by menas of which members of social group co-operate and interact." (भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतिकों की वह व्यवस्था है जिसके सहारे कोई व्यक्ति या सामाजिक समुदाय परस्पर सहयोग और आंतरक्रिया कर सकते हैं।)

क्रोचे - "Language is articulated limited sound organised for the purpose of expression." (अभिव्यंजना के लिए प्रयुक्त सीमित तथा सुसंगठित ध्वनि को भाषा कहते हैं।)

सपीर - "Language is a purely human and non-instivctive method of communicating ideas, emotions and desires by means of voluntarily produced symbols." (भाषा एक ऐसी विशुद्ध मानवीय एवं प्रयत्न साध्य ध्वनि व्यवस्था है जिसके माध्यम से व्यक्ति जब चाहे तब अपने विचारों, भावों एवं इच्छाओं को दूसरों पर व्यक्त करता है।

इस तरह भाषावैज्ञानिकों ने भाषा को परिभाषा बद्ध करने का प्रयास किया है विवेचित सभी परिभाषाओं पर गौर करने पर कुछ बातें सामने आती है कि चंद शब्दों में भाषा को बाँधकर उसकी पूरी तस्वीर स्पष्ट करना भी मुश्किल होता है, आलोचना करने पर वे सर्वथा निर्दोष नहीं सिद्ध हो पाती। किसी में कोई त्रुटि दिखती है तो किसी में कोई। अव्याप्ति, अतिव्याप्ति जैसे अनेक दोष हैं जिन पर परिभाषा बनाते समय ध्यान रखना होता है। अर्थात सभी परिभाषाएँ सटीक नहीं है ऐसा नहीं है। कभी-कभी अनावश्यक शब्द प्रयोग से लाभ नहीं होता। भाषा का स्वरूप देखते समय भाषा के दोनों (स्थूल तथा सूक्ष्म) रूप देखें जाते हैं। अर्थात भाषा अपने व्यापकतम रूप में (नेत्रग्राह्य, स्पर्शग्राह्य, श्रोत्रग्राह्य) वो साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा विचारों और भावों को व्यक्त करते हैं। मगर भाषाविज्ञान

में हम जिस भाषा का अध्ययन करते है वह इतनी व्यापक नहीं है। भाषाविज्ञान में प्रधानत: वाचिक भाषा का ही अध्ययन होता है। उस भाषा के बारे में संक्षेप में कहा जा सका है -

1) भाषा मनुष्यों के विचार-विनिमय का माध्यम है।

2) भाषा उच्चारण अवयवों से नि:सृत ध्वनियों का समूह है।

3) उच्चरित ध्वनियाँ विश्लेषणीय होती है।

4) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-समूह सार्थक होते हैं।

5) ध्वनि समूह के अर्थ यादृच्छिक होते हैं।

6) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-प्रतीकों के समूह में एक व्यवस्था होती है।

7) भाषा का प्रयोग उसे समझनेवाले समाज में होता है।

1.3 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

(अ) उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1. 'भाषा' शब्द किस भाषा के 'भाष्' धातु से बना है?
   अ) संस्कृत ब) उर्दू क) बोडो ड) मराठी

2. भावों को व्यक्त करने का सार्थक प्रयास है -
   अ) स्पर्श ब) भाषा क) संकेत ड) आँख

3. मनुष्य अपने विचारों को मुख्यत: कितने रूपों में प्रकट करता है?
   अ) चार ब) तीन क) दो ड) एक

4. भाषा का कौनसा रूप प्रभावी होता है?
   अ) संकेत ब) लिखित क) रंग ड) मौखिक

5. 'सोफिस्ट' में किसने ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं?
   अ) क्रोचे ब) स्वीट क) स्त्रुत्वा ड) प्लेटो

6. 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।' उक्त भाषा की परिभाषा के विद्वान है -
   अ) ब्लॉक और ट्रेगर ब) सपीर क) स्वीट ड) प्लेटो

7. पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों में 'विचारों को मूक या ध्वन्यात्मक बातचीत किसने माना है?
   अ) स्वीट ब) क्रोचे क) प्लेटो ड) स्त्रुत्वा

8. ''जिन ध्वनि चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है उनको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।'' उक्त भाषा की परिभाषा के भाषा वैज्ञानिक हैं -
   अ) पी. डी. गुणे ब) बाबुराम सक्सेना क) भोलानाथ तिवारी ड) सुकुमार सेन

9. संकेतों के द्वारा अपनी बात पहुँचाने मनुष्य किस साधन का प्रयोग करता है।

अ) नेत्र　　ब) कर्ण　　क) गंध　　ड) स्पर्श

10. भाषा को संकेत किसने माना है?

अ) प्लेटो　　ब) स्वीट　　क) वेन्द्रिय　　ड) स्त्रुत्वा

1.2.2 भाषा के अभिलक्षण (Property) :

'अभिलक्षण' शब्द संस्कृत भाषा का है। अर्थ है भेदक, लक्षण, विशिष्टता, मूलभूत लक्षण (Property)। भाषा विज्ञान में भाषा का संदर्भ मानवीय भाषा से है। अर्थात यह जानना आवश्यक हो जाता है कि मानव द्वारा विचार-विनिमय के लिए प्रयुक्त भाषा के अभिलक्षण या उसकी मूलभूत विशेषताएँ कौन-कौन सी है? अन्य भाषिक संदर्भों से मानवीय भाषा को पृथक् कैसे करते है? ये अभिलक्षण मानवीय भाषा की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण होते है। हॉकिट (Hoket) ने भाषा के सात अभिलक्षणें का वर्णन किया है। अपनी पुस्तक 'A course in Modern Linguistics', में मानवीय भाषा की प्रमुख विशेषताओं को रेखांकित करते हुए मानवेतर भाषाओं से उसकी पृथकता दिखाई है। अन्य भाषा वैज्ञानिकों ने भी भाषा के अभिलक्षणों का उल्लेख किया है जिसके आधार पर अभिलक्षणों की संख्या बढ सकती है। जिस पर चर्चा की जाती है -

1) यादृच्छिकता (Arbitrariness) :

यादृच्छिकता का अर्थ है, माना हुआ। यादृच्छिकता से तात्पर्य है कि ध्वनि प्रतीक (या यों कहें कि शब्द एवं उससे सम्बन्धी।) आशय में कोई तात्विक अथवा तार्किक सम्बन्ध नहीं है। अर्थात् ध्वनि प्रतीक ऐच्छिक है। एक विशेष समुदाय किसी भाव या वस्तु के लिए जो शब्द बना लेता है उसका उस भाव से कोई संबंध नहीं होता। वह समाज की इच्छानुसार माना हुआ संबंध है। जैसे वनस्पति विशेष के लिए प्रयुक्त 'वृक्ष' शब्द ध्वनि प्रतीक से अभिव्यक्त किया जाता है। उस वास्तविक वनस्पति एवं 'वृक्ष' शब्द में कोई सह जात अथवा तार्किक संबंध नहीं है। अर्थात यह आवश्यक नहीं है कि वनस्पति विशेष के लिए 'वृक्ष' शब्द विशेष का ही प्रयोग है। किसी वस्तु या भाव का किसी शब्द से सहज स्वाभाविक संबंध नहीं होता। यदि यह संबंध सहज स्वाभाविक होता तो अलग-अलग भाषाओं में एक वस्तु के लिए एक ही शब्द होता। 'वृक्ष' के लिए 'झाड', 'गाछ', ट्री जैसे अनेक शब्द विभिन्न भाषाओं में नहीं होते। विभिन्न भाषाओं के सभी शब्दों में यादृच्छिकता की स्थिति पायी जाती है, विभिन्न भाषाओं के वाक्यों में पदक्रम की व्यवस्था भी यादृच्छिकता होती है।

2) सृजनात्मकता (Creativity) :

मानवीय भाषा की मूलभूत विशेषता उसकी सृजनात्मकता है। सृजनात्मकता के लिए अंग्रेजी शब्द है 'Creative' मनुष्य शब्दों और वाक्यविन्यास की सीमित प्रक्रिया से हमेशा नए-नए प्रयोग करता है। अन्य प्राणियों में बोलने की प्रक्रिया में परिवर्तन नहीं होता। अर्थात मानवेतर प्राणी और मानव की भाषा में सृजनात्मकता के कारण भेद स्पष्ट होने लगता है। मानव, सीमित शब्दों को ही अलग-अलग ढंग से प्रयुक्त है और अप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी करता, कभी नए शब्दों का निर्माण करता है। साहित्य में कवि नए शब्द गढ़ देता है। पाठक उसका स्वीकार कर विषय संदर्भ

के आधारपर अर्थ का अन्वेषण करते है। इस तरह मनुष्य भावाभिव्यक्ति या अपने लंबे-चौडे भाषण के समय भिन्न भिन्न शब्दों या वाक्यों का प्रयोग करता है। नए-नए प्रयोग अर्थात उत्पादकता, सृजनात्मकता है।

3) अनुकरणग्राह्यता :

अनुकरण ग्राह्यता मानवीय भाषा का प्रमुख अभिलक्षण माना जाता है। मनुष्य की भाषा जन्मजात नहीं होती। मनुष्य, भाषा को समाज में अनुकरण से धीरे-धीरे सीखता है। मानवेत्तर प्राणियों की भाषा जन्मजात होती है तथा वे उसमें अभिवृद्धि या परिवर्तन नहीं कर सकते। अर्थात उनकी भाषा सभी कालों में एक जैसी ही रही है किंतु मानवीय भाषा अनुकरण ग्राह्य होने कारण मनुष्य केवल एक भाषा का जानकर नहीं रहता बल्कि एक से अधिक भाषाओं को भी सीखता है।

4) परिवर्तनशीलता (Interchangebility) :

मानव भाषा परिवर्तनशील होती है। मानवेतर जीवों की भाषा परिवर्तनशील नहीं होती जैसे बकरी, बिल्ली पीढी-दर पीढी एक प्रकार की ही अपरिवर्तित भाषा का प्रयोग करती आ रही है। मगर मानवीय भाषा परिवर्तित होती रहती है। तत्सम शब्दों के रूप बिगड़कर तद्भव बनते हैं। फिर संकर इस तरह परिवर्तित होते रहते हैं। एक युग में प्रयुक्त शब्द दूसरे युग तक आते-आते नया रूप ले लेते हैं। पुरानी भाषा में इतने परिवर्तन हो जाते हैं कि नयी भाषा का उदय हो जाता है। संस्कृत से हिंदी तक की विकास यात्रा भाषा की परिवर्तनशीलता का उदाहरण है। भाषा का विकास परिवर्तनशीलता के अभिलक्षण को अधिक स्पष्ट करता है।

5) विविक्तता (Discreetness) :

मानव भाषा की संरचना कई घटकों से होती है। ध्वनि से शब्द और शब्द से वाक्य विच्छेद घटक होते है। अर्थात मानव भाषा में अनेक इकाइयों का योग रहता है। इसीकारण मानव भाषा को विविक्तता कहा जाता है। भाषा में जिन ध्वनियों का प्रयोग किया जाता है, उनमें सामान्य रूप से अविच्छिन्न प्रवाह रहता है। बोलते समय हम अपने विचार को सम्पूर्ण रूप में व्यक्त करना चाहते हैं और उसके लिए ध्वनियों की अविच्छिन्न कडी का प्रयोग करते हैं यानी हम कोई विराम या मौन की स्थिति नहीं पाते। केवल शब्दों और शब्दों को ध्वनि इकाइयों में खंडित पाते हैं। इस प्रकार मानव की भाषा में विभिन्न इकाइयों की विच्छिन्न (विविक्त) स्थिति का अभिलक्षण दिखाई देता है।

6) द्वैत / द्वित्त्व अभिरचना (Duality) :

यह अभिलक्षण भाषा के दोहरे स्तर की ओर ध्यान आकृष्ट करता है। किसी बात को कहते या सुनते समय हम उसके दो निश्चित स्तर देख सकते है। पहले स्तर का संबंध कथ्य (अर्थ) से है, जिसका संबंध अविच्छिन्न विचार को अर्थ की दृष्टि से न्यूनतम इकाईयों की कडी में बांधने से है। दूसरे स्तर का संबंध अभिव्यक्ति माध्यम (ध्वनि) की इकाईयों से रहता है जैसे - विचार की न्यूनतम इकाई 'रबड' है, तो उसकी अभिव्यक्ति की न्यूनतम इकाईयाँ 'र्+अ+ब+अ+ड्+अ' है। ध्वनि की इन इकाईयों का अपना कोई अर्थ नहीं होता। केवल इनका अपना रूप और प्रकार्य होता है। 'रबड' रूपिम है किंतु 'रबड' में अर्थभेदक इकाई रूपिम नहीं। इस प्रकार रूपिम अर्थद्योतक इकाई है तो स्वनिम अर्थभेदक है। इससे स्पष्ट होता है कि मानवीय भाषा एक साथ दो अभिरचनाओं के प्रतिफल का परिणाम है इसी कारण भाषा को द्वित्त कहा गया है।

7) वाक्छल (Prevarication) :

भाषा का प्रयोग करते समय मनुष्य उन्हीं व्याकरणिक नियमों के प्रयोग की सावधानी बरतता है। व्याकरण के नियम उसके मन में चेतन, अचेतन रूप में उपस्थित रहते हैं। उसकी भाषा पदक्रम की दृष्टि से सही होती है किंतु यह होना भाषिक यथार्थ है। बाह्य यथार्थ से उसका कोई तार्किक संबंध नहीं होता, फिर भी कोई वाक्य बाह्य यथार्थ के संबंध में शुद्ध नहीं हो सकता। भाषा व्याकरणिक स्तर पर पूर्ण शुद्ध होते हुए भी तर्क की कसौटि पर खरी नहीं उतर सकती है। वाक्छल दो रूपों में हो सकता है। साधारण और चमत्कारिक। जैसे ''जयशंकर प्रसाद राष्ट्रकवि है।'' (सामान्य या साधारण वाक्छल), ''मैं मानव को इंसान बना सकता हूँ।'' (चमत्कारिक वाक्छल) इसीतरह भाषा कभी-कभी अशुद्ध संरचना को अज्ञानवश भी श्रोता तक पहुँचा सकती है।

8) विस्थापन / अंतरणता (Displacement) :

मानव, भाषा की खासियत है कि वह भूत, वर्तमान और भविष्यत तीनों कालों के विचारों का संप्रेषण करती है। समय और स्थान की दृष्टि से मानव भाषा विस्थापित हो सकती है। भाषा ही मनुष्य को अतीत की घटनाओं पर विचार करने की सामर्थ्य प्रदान करती है। जिसमें अतित एवं भविष्य की योजनाओं के संकेत होते हैं, एक स्थानपर बैठकर विश्व के किसी भी स्थान के सम्बन्ध में प्रतिक्रिया देने की क्षमता केवल मानव भाषा में हैं।

9) असहजवृत्तिकता (Non Instinctivity) :

अन्य प्राणियों की भाषा और मानवीय भाषा दोनों के बीच की पृथकता को अंकित करनेवाला यह अभिलक्षण है। मानवेतर भाषा प्राणी की सहजप्रवृत्ति आहार, निद्रा, भय, मैथुन से सम्बद्ध रहती है। इसके लिए वे कुछ ध्वनियों का उच्चारण करते हैं किंतु मानवीय भाषा सहजवृत्तिक नहीं होती।

10) मौखिक श्रव्य-सरणि (Vocal Auditory Channel) :

मनुष्य अपने भावों को दूसरों तक पहुँचाने के लिए ध्वनियों का प्रयोग करता है। अर्थात संदेश ध्वनि रूप में श्रोता तक पहुँचता है। मनुष्य की प्रकृति मूलत: मौखिक श्रव्य ही है। वक्ता अभिव्यक्ति के लिए भाषिक प्रतीक को मुख से उच्चरित करते हैं और ग्रहण करनोला उसे कान से सुनता है। उसका लिखित रूप मौखिक रूप पर ही आधारित होता है। मानवेतर प्राणी संप्रेषण की कुछ अन्य सरणियों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए भौरा गुंजन कर तथा मधुमक्खिया नृत्य के माध्यम से भाषाभिव्यक्ति करती है। इस प्रकार केवल मानव भाषा ही मौखिक श्रव्य माध्यम पर आधारित है।

11) सांस्कृतिक-संचरण (Cultural Transmission) :

मानव भाषा सांस्कृतिक संचरण का परिणाम है। मानव जिस संस्कृति या परिवेश में पलता तथा बड़ा होता है उस संस्कृति या परिवेश का प्रभाव उसकी भाषा पर पडता है। विदेशी संस्कृति में पला-बड़ा बच्चा विदेशी संस्कृति से प्रभावित रहेगा। अंग्रेजी संस्कृति से प्रभावित उसकी भाषा में अंग्रेजी संस्कारों के अनुसार शब्द, वाक्य प्रयोग होंगे। भारत में अनेक सम्प्रदायों से प्रभावित प्रांत है। खान-पान, रीतिरिवाज, पोशाक आदि। प्रांतो-प्रांतो की अपनी-अपनी पृथक संस्कृति है परिणामत: भाषा भी सांस्कृतिक संचरण से प्रभावित रहती है।

12) भाषा की प्रतीकात्मकता :

भाषा का प्रमुख अभिलक्षण उसकी प्रतीकात्मकता है। प्रतीक भाषा की एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत किसी शब्द विशेष का एक निश्चित अर्थ होता है। वास्तव में शब्द के गुण से अर्थ का कोई संबंध नहीं होता। बल्कि विशिष्ट वस्तु को प्रतीकित करने के लिए प्रचलित शब्द होता है। उदा. 'पंकज' और 'जलज' शब्द दोनों कमल के पर्याय है जबकि दोनों का अर्थ क्रमश: कीचड़ जल में पैदा होनेवाला है। प्रतीक शब्द के अनिवार्य गुण या धर्म से कुछ अलग ही अपनी सत्ता रखता है। प्रतीक मूल नहीं होता वह किसी अन्य पदार्थ के लिए व्यवहृत होता है। उसमें मूल पदार्थ को अनुभव करने की शक्ति होती है। प्रसिद्ध विद्वान पीयर्स ने प्रतीक के बारे में कहा है कि, "A sign is something that stands to some body for something else in some respect or capacity." प्रतीक की अवधारणा त्रिस्तरीय है, क्रमश: 'संकेतित वस्तु,' संकेतार्थ और संकेत प्रतीक कहा जाता है। इसमें सांकेतिक वस्तु का सम्बन्ध बाह्य जगत में स्थित इकाई से है जैसे बैल, किताब आदि। संकेतार्थ प्रयोगकर्ता के मन में स्थित उस इकाई की संकल्पना है। प्रतीक, संकेतार्थ को अभिव्यक्ति देनेवाली इकाई है। जो संकेतित वस्तु के स्थान पर कुछ विशेष संदर्भ में व्यक्त होती है।

13) अधिगमता (Learnability) :

मानव की भाषा अर्जन और अभ्यास प्रक्रिया पर आधारित होती है। वह हमें प्राप्त नहीं होती, वरना उसे सीखना पडता है। साथ ही एक भाषा जाननेवाला व्यक्ति अन्य भाषाएँ सीख सकता है, बोल सकता है। दूसरी भाषा सीखते समय उस भाषा की रूप, रचना व्यवधान तो उत्पन्न करते हैं किंतु अभ्यास करने से ये व्यवधान दूर हो जाते हैं अर्थात मनुष्य के मश्तिष्क की ऐसी रचना है वह कई भाषाएँ सीख सकता है।

14) भूमिकाओं का पारस्परिक परिवर्तन :

भाषा में प्रमुख दो पक्ष होते है - वक्ता और श्रोता। जब कोई वक्ता या श्रोता हो तभी भाषा का अस्तित्व संभव होता है। वार्ता के समय वक्ता और श्रोता की भूमिकाएँ परिवर्तित होती रहती है। यानी एक समय पर जो वक्ता होता है वह श्रोता बनता है और श्रोता वक्ता की भूमिका ग्रहण करता है। इसी प्रकार भाषा में भूमिकाओं का पारस्परिक परिवर्तन होता रहता है।

15) विशेषता / दक्षता (Specialization) :

इस अभिलक्षण से एक बात स्पष्ट होती है कि प्रयोग में स्पष्टता और सहजता होती है। अन्य कार्य करते समय भी मनुष्य संप्रेषण क्रिया में संलग्न रह सकता है। भोजन, लेखन, या मोटरगाडी चलाते समय भी भाषिक संप्रेषण कर सकता है। संप्रेषण में सभी शब्द शक्तियों (अभिधा लक्षणा, व्यंजना) का उपयोग करता है जो बात मानवेतर भाषाओं में संभव नहीं है। अत: विशेषता या दक्षता मानवीय भाषा का एक प्रभावी लक्षण है।

संक्षेप में कहा जाए तो उपर्युक्त मानवीय भाषा के अभिलक्षणों को गौर से देखा तो ये अभिलक्षण केवल मानव-भाषा में ही परिलक्षित होते हैं। मानवेतर भाषाओं में इनका अभाव दिखाई देगा, अत: ये अभिलक्षण मानवीय भाषा की पृथकता को स्पष्ट करने में समर्थ है ऐसा ही मानना पडेगा। साथ ही भाषा की सामान्य विशेषताओं से परिचित होना भी आवश्यक लगता है।

भाषा की प्रवृत्तियाँ / प्रकृति / विशेषताएँ :

भाषा का गहन सम्बन्ध समाज से है। व्यक्ति समाज का एक घटक है और समाज से सन्निहित भाषा समाज जीवन के प्रयोग को सबल बनाती है। यही भाषा उत्तरोत्तर सहज स्वभाव एवं अपने स्वाभाविक गुणों से प्रस्तुत होकर विकासोन्मुखी होती रहती है। ऊपर हम मानवीय भाषा के अभिलक्षण अर्थात उसकी प्रॉपर्टी देख चुके हैं। प्रॉपर्टी के बिना मानवीय भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन संसार में जितनी भाषाएँ हैं उनमें भाषा सम्बन्धी कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ और विशेषताएँ हैं जो सभी भाषाओं में समान रूप से पायी जाती है। मानवेतर भाषा और मानवीय भाषा दोनों का अध्ययन करनेवाला प्राणी मनुष्य ही है। भाषाविज्ञान में जो भाषा रहती है वह उतनी व्यापक नहीं रहती। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से ''जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर-विचार-विनिमय का सह्योग करते हैं उस यादृच्छिक रूढ़ ध्वनि संकेत की प्रणाली को भाषा कहते है।'' (शर्मा डॉ. देवेन्द्रनाथ : 1972) यह भाषा व्याकरण सम्मत होती है। अर्थात व्याकरण के नियम किसी भाषा विशेष में लागू होते हैं। किन्तु अब जिन प्रवृत्तियों, प्रकृति या विशेषताओं की चर्चा होगी उसका संबंध केवल भाषा से है, ये भाषा की विशेषताएँ है। जिसमें दो बातें प्रमुख है भाषा अर्जित सम्पत्ति है और वह संश्लिष्टावस्था से विश्लिष्टावस्था की ओर उन्मुख होती है। इसके साथही भाषा की जो विशेषताएँ है उन्हें देखना भी आवश्यक है।

1) भाषा परम्परागत होती है।
2) भाषा अर्जित होती है।
3) भाषा सामाजिक सम्पत्ति है।
4) भाषा परिवर्तनशील होती है।
5) भाषा अनुकरण से सीखी जाती है।
6) भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है।
7) भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता।
8) भाषा कठिनता से सरलता की ओर जाती है।
9) भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है।
10) भाषा का एक स्थिर और मानक रूप होता है।
11) भाषा संयोगअवस्था से वियोग अवस्था की ओर जाती है।

इस तरह भाषा में प्राप्त समान और सामान्य तत्त्व ही भाषा की विशेषताएँ हैं । अब क्रमश: इनपर विचार किया जाएगा -

1) भाषा परम्परागत होती है :

हर भाषा का अपना एक इतिहास अर्थात परम्परा रहती है। आज जिस भाषा को हम देखते है, बोलते है, विचार-विनिमय करते है उसका इतिहास बहुत पुराना है। उसके रूप में जरूर परिवर्तन हुआ होगा किंतु वह सदियों से चली आ रही है। भाषा पीढी-दर-पीढी आगे चलती रहती है, अपनी पुरानी व्यवस्था के साथ नई-नई बातों को अपनाती हुई अनावश्यक बातों का त्याग करके आगे बढती है। भाषा की परम्परा कब से शुरू हुई यह देखना अपने

आप से छलावा होगा। एक बात सच है कि हम भाषा को सब से पहले अपने माता-पिता से ग्रहण करते हैं। इस तरह इस भाषा की एक परम्परा शुरू हो जाती है इसी परम्परा से समाज में मनुष्य ने उसे ग्रहण किया है।

2) भाषा अर्जित सम्पत्ति है :

भाषा का प्रचार-प्रसार समाज से होता है। भाषा एक सम्पत्ति है और वह समाज में होती है। भाषा का अर्जन समाज में रहकर किया जाता है, भले ही हम कहे भाषा को हम माता-पिता से ग्रहण करते हैं किंतु माता-पिता भी किसी न किसी समुदाय या समाज के अंग होते हैं वे भी भाषा को समाज में रहकर ही अर्जित करते हैं। मनुष्य में अन्य प्राणियों की अपेक्षा इतनी विलक्षणता होती है कि वह भाषा सीख सकता है। वह जिस वातावरण या समाज में रहता है उसी की भाषा सीख सकता है। हमारे बच्चे जिस भाषा के वातावरण में रहेंगे वहाँ की भाषा अर्जित करेंगे, अंग्रेजी प्रदेश के बच्चे भारत के जिस प्रांत में रहेंगे उस प्रांत की भाषा सीखेंगे और बोलेंगे। अर्थात जिस भाषा के क्षेत्र में जो व्यक्ति उत्पन्न होता है उसे वह अनायास ही सीख लेता है। भाषा के अर्जन का यही अर्थ है कि उसे अपने आसपास के वातावरण से सीखना पडता है।

3) भाषा सामाजिक सम्पत्ति है :

भाषा पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार नहीं हो सकता। भाषा समाज द्वारा निर्मित समाज की वस्तु या सम्पत्ति है। समाज में रहकर विचारों के आदान-प्रदान के लिए माध्यम रूप में समाज की भाषा को ग्रहण किया जाता है। कभी उसे परम्परा से ग्रहण किया जाता है या कभी मनुष्य उसका अर्जन करता है। इस भाषा का सम्बन्ध समाज से बहुत घनिष्ठ रहता है। मनुष्य द्वारा परम्परा से प्राप्त और अर्जित यह भाषा समाज की सम्पत्ति (वस्तु) बनकर रह जाती है । उसका विकास भी समाज में ही होता है। भाषा जैसी सामाजिक वस्तु को शिशु तक पहुँचाने का काम पहले-पहले माता करती है इसलिए उसे मातृभाषा कहते हैं किंतु जिस भाषा को वह सिखाती है वह समाज की ही सम्पत्ति होती है।

4) भाषा परिवर्तनशील होती है :

परिवर्तन यह प्रकृति की एक विशेषता है, सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में धीरे धीरे परिवर्तन होने लगता है। एक तो वह वस्तु पुरानी बन जाती है नहीं तो उसमें नयापन लाया जाता है। जिस प्रकार बार-बार वस्तु का उपयोग करने से वह घिस जाती है उसी प्रकार भाषा के कुछ शब्द नए अर्थ ग्रहण करते हैं अर्थात भाषा भी विकसित होती रहती है। उसका विकास ही परिवर्तन है। एक भाषा का जो रूप आज देखने को मिलता है वह सौ वर्षों पहले नहीं था और जो सौ वर्ष पहले था वह उससे पहले नहीं था। उदाहरण के लिए वेद ग्रंथों में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है। उसका वही रूप वाल्मीकी, कालिदास जैसे संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रंथों में प्रयोग नहीं हुआ है। अनेक भाषाओं का जो विकास हुआ है वह परिवर्तन के अन्तर्गत ही आता है। यह परिवर्तन ध्वनि-शब्द, व्याकरण, इनमें कोई भी अपरिवर्तित नहीं रहता। सत्याग्रह या आन्दोलन जैसे शब्द सन 1921 ई. के बाद प्रयोग में आने लगे। वैदिक भाषा में 'असुर' शब्द का अर्थ 'देव' होता था जो बाद में राक्षस का वाचक बन गया।

5) भाषा अनुकरण से सीखी जाती है :

भाषा अनुकरण के द्वारा सीखी जाती है। इसके साथ ही बौद्धिक प्रयत्न द्वारा भी सीखी जाती है। अत:

अनुकरण और बौद्धिक प्रयत्न दोनों पद्धतियों से भाषा सीखी जा सकती है। हम अपनी मातृभाषा अनुकरण द्वारा सीखते हैं और अन्य भाषाएँ (भिन्न प्रदेश, विदेश की भाषाएँ) हिंदी, फ्रान्सिसी अंग्रेजी आदि भाषाएँ बौद्धिक प्रयत्न द्वारा बच्चा सबसे पहले अपने माता-पिता, भाई, बहनों आदि पारिवारिक सदस्यों के विभिन्न शब्दों के उच्चारण को सुनता है और उन्हें ग्रहण करके वैसा ही बोलने का प्रयत्न करता है अत: यहाँ वह बडों का अनुकरण करता है। इसीलिए बच्चों से बात करते समय जानबूझकर हकलाकर या तुतली बोली में बोलना गलत है। बच्चा बडों का अनुकरण करता है। इसीकारण उससे शब्दों का स्पष्ट और सही उच्चारण नहीं हो पाएगा। इसलिए बच्चों से बात करते समय शब्दों को बीच-बीच में तोड-मरोडने के बजाय स्पष्ट, साफ और शुद्ध उच्चारण करना अनिवार्य है, इसतरह हम माता-पिता और समाज का अनुकरण करके और बौद्धिक प्रयत्न से भाषा सीखते है।

6) भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है :

भाषा पैतृक सम्पत्ति के रूप में नहीं मिलती। माता-पिता की सम्पत्ति जमीन, जायदाद, धन, रुपया-पैसा उनके निधन के बाद विरासत में उनकी संतान को सबकुछ मिल सकता है किंतु भाषा की स्थिति ऐसी नहीं है। माता-पिताओं से बच्चे भाषा सीखते है मगर माता-पिता यदि किसी एक दो भाषाओं के जानकार या विद्वान हो तो उन्होंने पाया हुआ भाषा रूपी धन या सम्पत्ति विरासत में बच्चों को सौ प्रतिशत रूप में नहीं मिलता। अर्थात माता-पिता की अन्य सम्पत्ति की तरह उनकी संतान को विरासत के रूप में भाषा नहीं मिलती।

7) भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता :

भाषा का परिवर्तनशील होना ही स्पष्ट करता है कि भाषा का कोई अंतिम स्वरूप नहीं होता। भाषा हमेशा बदलती रहती है अर्थात जीवित भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता। जो भाषा, व्यवहार में चल रही है जिसका विचार विनिमय के लिए प्रयोग हो रहा है उसका विकास होता रहता है। वह उसके जीवित होने का लक्षण है। मगर जो भाषा प्रयोग की दृष्टि से समाज से उठ गई है अर्थात प्रचलित नहीं है वह मृत सी हो जाती है। किन्तु दोनों का भी कोई अंतिम रूप नहीं होता। भाषा के ध्वनि-संकेत सीमित है उनकी संख्या निश्चित है। मगर भाषा अथ से इथ तक नहीं है।

8) भाषा कठिनता से सरलता की ओर जाती है :

मनुष्य की प्रवृत्ति है कि वह जीवन में जो सहज-सरल होगा उसे पहिले प्राप्त करता है। सहज-सरल रास्ते पर से चलना सब पसंद करते हैं मगर चढ़ाई या दुर्गम घाटी से चलना कठिन-सा लगता है। मनुष्य अपने विचारों को प्रकट करने के लिए जिस माध्यम भाषा का प्रयोग करता है उसमें भी वह सरलता चाहता है। बच्चों को भाषा सीखाते समय सहज-सरल आसान रूपों को पहले सिखाया जाता है। पहली कक्षा में व्याकरण नहीं पढ़ाया जाता। पढ़ाते समय स्वर, व्यंजन ऱ्हस्व, दीर्घ मात्रा आदि उच्चारण सिखाते समय भी प्रथम सरल उच्चारण बाद में कठिन उच्चारण, भाषा के कठिण रूप सरल होने लगते हैं जैसे कर्म-कम्म-काम, अक्षि-अक्खि-आँख आदि शब्दों का विकास क्रम इसका प्रमाण है। भाषा के कठिन रूपों का सरलीकरण किया जाना ही उसका कठिनता से सरलता की ओर जाना है। उदा. ब्रह्म-ब्रह्म, चिन्ह-चिह्न, चट्टोपाध्याय - का चटर्जी लिखा जाना कठिनता से सरलता की ओर जाने की प्रवृत्ति का परिणाम है।

9) भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है :

प्रत्येक भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है। कोस-कोस पर बदले पानी आठ कोस पर बानी। इस उक्ति के अनुसार आठ कोस फासला चले जानेपर भाषा में परिवर्तन आने लगता है। अर्थात उच्चारण, शैली में थोडा-थोडा अन्तर दिखाई देने लगता है। हर भाषा की स्थान और काल की दृष्टि से सुनिश्चित सीमाएँ होती है। महाराष्ट्र की भौगोलिक सीमाओं के अंदर मराठी भाषा की सीमाएँ है। हमारे देश में भाषावार प्रांत रचना हुई है अत: भाषाओं की सीमाओं को लेकर कोई संभ्रम की स्थिति नहीं है। हर द्वीप में जितने देश हैं । उन देशों की भौगोलिक सीमाएँ ही उन देशों की भाषाओं की भौगोलिक सीमाएँ हैं। सीमाओं का मतलब भाषा अपनी सीमा तक प्रभावी रहती है सीमा के बाद वह प्रभावहीन बन जाती है, सीमा के बाहर उसका स्वरूप थोड़ा या अधिक परिवर्तित हो जाता है।

10) भाषा का एक स्थिर और मानक रूप होता है :

परिवर्तन भाषा का अनिवार्य क्रम है। उसके परिणाम स्वरूप भाषा में विविधता आ जाती है। इसी कारण एक युग की भाषा दूसरे युग की भाषा से भिन्न होती है। भाषा नैसर्गिक नियम से परिवर्तित होना चाहती है और मनुष्य उस परिवर्तन को रोकना चाहता है उस पर नियंत्रण करने का प्रयास करता रहता है। उसे स्थिर बनाने का प्रयास ही मानक रूप को जन्म देता है। मानक रूप में व्याकरण की भूमिका भी अहम रहती है। मानक रूप का प्रयोग प्रदेश के शासन के सभी प्रकार के कामकाज के लिए किया जाता है।

11) भाषा संयोगअवस्था से वियोग अवस्था की ओर जाती है :

भाषा प्राय: संयोग से वियोग की ओर जाती है। संयोग का अर्थ है मिली होने की स्थिति जैसे- 'लक्ष्मण: गच्छति' तथा वियोग का अर्थ है अलग हुई स्थिति, जैसे 'लक्ष्मण जाता है। संस्कृत में केवल 'गच्छति' संयुक्त रूप से काम चल जाता था। पर हिन्दी में 'जाता है' (वियुक्त रूप) का प्रयोग करना पडता है। अर्थात संस्कृत भाषा संयोगावस्था की है और इससे विकसित हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा वियोगावस्था की है। संस्कृत, हिंदी और अंग्रेजी की अपेक्षा प्राचीन है। अत: स्पष्ट होता है कि भाषा की विशेषता है - संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाना।

इस प्रकार भाषा के अभिलक्षण के साथ भाषा की प्रवृत्तियों पर भी इसलिए प्रकाश डाला गया है कि मानवीय भाषा की पृथकता के साथ भाषा की प्रवृत्तियों को समझना सहज होगा। उसका सहज स्वभाव ही उसकी विशेषताएँ है जो सभी भाषाओं में प्राप्त होती है।

1.3 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

(ब) उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1. 'अभिलक्षण' शब्द कौनसी भाषा का है?
   अ) संस्कृत   ब) कन्नड   क) कोकणी   ड) पाली
2. भाषा के सात अभिलक्षण है, ऐसा किसने कहा है?

अ) ए. ए. कार्डिनोर ब) हॉकिट क) सस्यूर ड) मार्तिन

3. किस शब्द का अर्थ है 'माना हुआ'?

अ) अनुकरण ग्राह्यता ब) वाक्छल क) यादृच्छिकता ड) विस्थापन

4. भाषा के नए-नए शब्द और वाक्य प्रयोग याने भाषा का कौनसा अभिलक्षण है?

अ) विस्थापन ब) अधिगमता क) यादृच्छिकता ड) सृजनात्मकता

5. विरासत में कौनसी चीज नहीं मिलती?

अ) जमीन ब) भाषा क) पिताजी का धन ड) जायदाद

6. भाषा सीखने का सहज-सरल रूप है ....

अ) व्याकरण ब) स्कूल क) पुस्तक ड) अनुकरण

7. भाषा की सबसे बडी विशेषता है ....

अ) परिवर्तन ब) कठिनता क) संयोगावस्था ड) अंतिम रूप

8. भाषा में प्रमुख कितने पक्ष होते है?

अ) एक ब) दो क) तीन ड) चार

9. भाषा किस प्रकार की सम्पत्ति है?

अ) व्यक्तिगत ब) पैतृक क) सामाजिक ड) व्यावसायिक

10. महाराष्ट्र की भौगोलिक सीमाओं के अन्दर किस भाषा की सीमाएँ हैं?

अ) हिंदी ब) मराठी क) कन्नड ड) तेलगु

1.2.3 भाषा के विभिन्न रूप :

भाषा के अन्तर्गत भाषा के बहुत से रूप आते हैं। किन्हीं दो व्यक्तियों की भाषा कदापि एक सी नहीं होती है। दोनों की भाषा में भेद नजर आता है। उच्चारण, वाक्यविन्यास, शब्द भंडार आदि में यह अन्तर साफ दिखाई देने लगता है। एक वर्ग के दो व्यक्तियों की भाषा में भी पर्याप्त अंतर होता है भलेही वे साहित्यिक हो, डॉक्टर हो या प्रोफेसर। इस तरह हम देखे तो जितने व्यक्ति होंगे उतनी ही भाषाएँ भी। भाषा का अविर्भाव व्यक्ति में होता है किंतु उसकी प्रेरक शक्ति निश्चित रूप से ही समाज है। अर्थात व्यक्ति-व्यक्ति की भाषा में अन्तर होते हुए भी एक समुदाय की भाषा में समानता होती है। भाषा के विभिन्न रूपों का विभाजन कई आधारों पर किया जा सकता है - इतिहास, भूगोल, प्रयोग, निर्माण, मानकता, मिश्रण, संस्कृति, व्यवसाय, शिक्षा आदि। इन आधारों पर भाषा में अलगाव आ जाता है, भाषा के ये भिन्न स्तर या पृथक रूप ही भाषा के विभिन्न रूप कहे जाते हैं। इस तरह कई आधारों पर भाषा के भेद बनते हैं किन्तु हर समय सभी भेद लाभकारी होते हैं ऐसा नहीं है। हम पाठ्यक्रम के अनुसार भाषा के विभिन्न रूपों का अध्ययन करेंगे।

1) मानक भाषा :

'मानक' शब्द अंग्रेजी 'स्टैंडर्ड' के प्रतिशब्द के रूप में बनाया गया है। 'स्टैंडर्ड लैंग्विज' के अनुवाद के रूप में 'मानक भाषा' शब्द चल पड़ा है। मानक भाषा के अर्थ में 'साधुभाषा', 'टकसाली भाषा', 'शुद्ध भाषा', 'आदर्श भाषा' तथा 'परिनिष्ठित भाषा' आदि भी प्रयोग किए जाते हैं।'[2] (तिवारी भोलानाथ : 2011)

भाषा का मानक रूप वह है जिसमें वह एक बृहतर समुदाय के विचार-विनिमय का माध्यम बनती है, अर्थात यह भाषा शिक्षित वर्ग की वाणी की प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेती है, तब वह मानक या आदर्श भाषा कहलाती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इस भाषा का प्रयोग शिक्षा, दीक्षा, राजकीय कार्यों अर्थात शासन और साहित्यिक रचनाओं में किया जाता है।

मानक भाषा मूलत: प्राय: एक बोली होती हैं किन्तु वह मानक बनते-बनते अन्य क्षेत्रों के ऐसे तत्त्व जो मूलत: उस बोली में नहीं होते उन्हें ग्रहण कर वह भाषा, वह मूल बोली नहीं रह जाती, तथा उसकी संरचना, उसका शब्द भांडार तथा व्याकरण सभी कुछ उससे न्यूनाधिक रूप से अलग हो जाते हैं। उसके लिखित और मौखिक दो रूप होते है। मौखिक रूप सहज सुंदर होता है।

मानक भाषा विभिन्न स्त्रोतों से अनेकानेक प्रकार के तत्त्व ग्रहण करती है और उनमें समन्वय कर अपनी संरचना में एकरूपता लाती है। यानी अपने में बहुरूपता लाने को बाध्य होती है। 'खडी बोली' हिंदी भाषा का उदाहरण यहाँ लिया जा सकता है। आदिकाल, मध्यकाल, आधुनिक काल तथा सांस्कृतिक जागरण से लिए गए तत्त्वों को जोडते जोडते एकरूपी अथवा समरूपी मानक भाषा बनी है।

आचार्य श्यामसुंदर दास मानक भाषा को टकसाली भाषा कहते हैं। उन्होंने इसे परिभाषाबद्ध किया है - ''कई विभाषाओं में व्यवहृत होनेवाली एक शिष्ठ-परिगृहीत विभाषा ही भाषा (टकसाली भाषा) कहलाती है।

मानक भाषा, विशाल भूभाग पर विचारविनिमय के लिए प्रयुक्त होती है। वह व्याकरण से नियुक्त और उच्चारण से एकरूप होती है। उसमें अभिव्यक्ति की क्षमता बडी व्यापक होती है किंतु लंबे अर्से के बाद उसका रूप स्थिर होता है और वह धीर-धीरे व्यवहार से उठकर प्राचीन भाषा का रूप धारण करती है। मानक भाषा कई रूपों में काम करती है - एक सूत्र में बाँधना, विचार-विनिमय के क्षेत्र को विस्तृत बनाना, भाषिक मानदंड प्रदान करना तथा मानक भाषाओं के प्रयोक्ताओं को अलगाना आदि।

2) उपभाषा (Sub-Language) :

उपभाषा, किसी भाषा के अन्तर्गत ज्यादा मिलती-जुलती बोलियों का समूह है। जो एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है और वह उस क्षेत्र की मानक भाषा से भिन्न होती है। उपभाषा कोई भाषा या बोली नहीं होती बल्कि कई बोलियों का समूह होती है। उपभाषा का क्षेत्र बोली से विस्तृत और भाषा से छोटा होता है। एक भाषा क्षेत्र में यदि दस बोलियाँ है और उनमें आपस में मिलती-जुलती कुछ भाषाओं के तीन समूह बनते हैं, तो उस भाषा क्षेत्र में तीन उपभाषाएँ हुई। इसमें एक उपभाषा दूसरी उपभाषा के लिए बोधगम्य होती है। हिंदी भाषा क्षेत्र में पाँच उपभाषाएँ है - पश्चिमी हिंदी, राजस्थानी हिंदी, पहाडी हिंदी, पूर्वी हिंदी और बिहारी हिंदी।

i) पश्चिमी हिंदी (उपभाषा) के अन्तर्गत की बोलियाँ -
ब्रज, खडी बोली, बांगरू बुंदेली और कन्नौजी।

ii) राजस्थानी हिंदी (उपभाषा) के अन्तर्गत की बोलियाँ -
मारवाडी, जयपुरी, मेवाती और मालवी।

iii) पहाडी हिदी (उपभाषा) के अन्तर्गत की बोलियाँ -
गढवाली, कुमाऊँनी और नेपाली।

iv) पूर्वी हिंदी (उपभाषा) के अन्तर्गत की बोलियाँ -
अवधी, बघेली और छत्तीसगढी।

v) बिहारी हिंदी (उपभाषा) के अन्तर्गत की बोलियाँ -
भोजपुरी, मगही और मैथिली।'[3] (मौर्य डॉ. राजनारायण : 1984)

उपर्युक्त उपभाषाओं के अन्तर्गत आनेवाली बोलियाँ और बोलियों के समूह से बनी उपभाषाएँ कम-अधिक मात्रा में समान ही होती है। उच्चारण, के साथ शब्दावलीगत और प्रयोगगत अन्तरों के होते हुए भी उपभाषाएँ समझ में आती है। उपभाषा अपने प्रान्त अथवा उपप्रान्त में साहित्यिक रचना की भी भाषा होती है।

3) बोली (Dialect) :

'बोली' शब्द अंग्रेजी डायलेक्ट (Dialect) का प्रतिशब्द है। हिंदी के कुछ भाषावैज्ञानिकों ने इसे विभाषा, प्रातींय भाषा, उपभाषा आदि भी नाम दिए है। वस्तुत: बोली, विभाषा की तुलना में बहुत छोटी होती है। अर्थात बोली, विभाषा के अन्तर्गत अपेक्षाकृत छोटा स्थानीय रूप है। और उपभाषा के बारे में ऊपर विवेचन में कहा गया है कि 'एक भाषा के अंतर्गत मिलती-जुलती बोलियों के समूह से उपभाषा बनती है।' उपभाषा कोई स्वतंत्र भाषा न होकर सीमित क्षेत्र में बोली जाती है।

भाषा और बोली में अन्तर निर्दिष्ट करना बहुत सरल नहीं है। प्राय: लोग भाषा के लिए 'बोली' और बोली के लिए 'भाषा' शब्द का भी प्रयोग करते हैं। जैसे - 1) तुम्हारी भाषा मेरी समझ में नहीं आती। 2) उसकी बोली मेरी समझ में नहीं आयी। हम कभी ब्रज भाषा, अवधी भाषा और कभी ब्रज बोली, अवधी बोली ऐसा भी प्रयोग करते हैं। फिर भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिए बोली का पृथक रूप स्पष्ट करना ही पडता है। बोली का अपना पृथक स्थान है। 'बोली' किसी भाषा का एक रूप है जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में बोली जाती है और जिसमें उक्त भाषा के मानक या साहित्यिक रूप से पर्याप्त अन्तर होता है। बोली का अस्तित्त्व, उच्चारण का ढंग व्याकरणिक गठन पर निर्भर करता है।

बोली का प्रयोग दैनिक कामकाज के लिए किया जाता है। बोली का क्षेत्र सीमित होता है। भौगोलिक उपक्षेत्र, पूरी नदी, पहाड़ आदि के कारण एक भाषा क्षेत्र में संबंध और सम्पर्क टूट जाने से बोली का जन्म होता है। कभी-कभी राजनीतिक और आर्थिक कारणों से कुछ लोग दूर जाकर बसते हैं, तो कभी आसपास की भाषाओं के प्रभाव से

बोली का उदय होता है। एक भाषा क्षेत्र में अनेक बोलियाँ प्रयुक्त होती है उदा. हिंदी भाषा क्षेत्र में बुंदेली, खडी बोली, अवधी ये हिंदी की बोलियाँ है। साहित्य की श्रेष्ठता, धार्मिक केंद्र, बोलनेवालों की संख्या, पहाड, नदी, राजनीति आदि कारणों से बोलियों का महत्त्व और भाषा बनती है, जैसे अंग्रेजों की बोली से अंग्रेजी का महत्व बढा, दिल्ली के समीप की खडीबोली आज भाषा में परिवर्तित होने लगी है। यानी बोली, कली है। कब कली फूल बन जाती है। इसके बारे में बताया नहीं जा सकता।

बोली का क्षेत्र, बोली का स्वरूप और बोली का अर्थ, बोली और भाषा की पृथकता इनके आधार पर ही भोलनाथा तिवारी ने बोली की व्याख्या कुछ इस प्रकार दी है, ''बोली किसी भाषा के एक ऐसे सीमित क्षेत्रिय रूप को कहते हैं जो ध्वनि, रूप, वाक्य गठन, अर्थ, शब्द-समूह तथा मुहावरे आदि दृष्टि से उस भाषा के परिनिष्ठित तथा अन्य क्षेत्रिय रूपों से भिन्न होता है, किंतु इतना भिन्न नहीं कि अन्य रूपों के बोलनेवाले उसे समझ न सकें, साथ ही जिसके अपने क्षेत्र में कहीं भी बोलनेवालों के उच्चारण, रूप-रचना, वाक्य-गठन, अर्थ, शब्द-समूह, तथा मुहावरों आदि में कोई बहुत स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण भिन्नता नहीं होती।'' इस व्याख्या में तिवारीजीने बोली की एक-एक परत खोलकर बोली को अधिक स्पष्ट किया है।

4) उपभाषा (Sub-Dialect) :

उपबोली को स्थानिक बोली के नाम से भी अभिहीत किया जाता है। अंग्रेजी में इसे 'लोकल डाइलेक्ट' (Local-Dialect) कहते हैं। भाषा का यह रूप भूगोल पर आधारित है। इसका प्रयोग एक छोटे से क्षेत्र में किया जाता है।

'उपबोली' बहुतसी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप है। उपबोली के बारे में हम कह सकते हैं कि किसी छोटे क्षेत्र की ऐसी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप, जिनमें आपस में कोई स्पष्ट अन्तर न हो, स्थानीय बोली या उपबोली कहलाता है। अर्थात उपबोली अनेक व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप है। एक बोली में अनेक व्यक्ति बोलियाँ होती है। उदा. बुंदेली बोली में 'राठौरी' नामक एक उपबोली है। किसी बोली के वर्णन में जब हम उसके पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी, मध्यवर्ती आदि उपरूपों की बात करते हैं तो हमारा आशय उपबोली या स्थानीय बोली से होता है। भोजपुरी, अवधी, ब्रज आदि बोलियों में इस प्रकार की कई छोटी-छोटी उपबोलियाँ है।

भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है। वह समाज में मान्यता प्राप्त होती है। एकाधिक उपभाषाएँ मिलकर एक भाषा बनती है, जैसे हिंदी के अंतर्गत पाँच उपभाषाएँ है। वैसे ही एकाधिक उपबोलियाँ मिलकर एक उपभाषा बनती है। या बोली वर्ग बनता है जैसे पूर्वी हिंदी (अवधी), बघेली और छत्तीसगढी आदि। उपबोली (sub-dialect) एकाधिक व्यक्तिबोलियाँ या स्थानिय बोलियाँ मिलकर एक उपबोली बनती है। उपबोली का क्षेत्र बहुत छोटा होता है। सीमित लोगों के मुँह से वह निकलती है, अर्थात उसपर लोकल रंग अधिक रहता है। व्यक्तिबोली बोलनेवाला अन्य भाषा क्षेत्र में जाकर भिन्न, अपरिचित लोगों से भाषिक व्यवहार करते समय भाषा का प्रयोग करता है न कि उपबोली का। उपबोली का प्रयोग करने के लिए केवल अपने गाँव, स्थान के व्यक्ति के साथ ही बातचित के समय प्रयोग होता है। उपबोली घरेलू है स्थानिक है। उसमें साहित्य रचना, पत्र लेखन न के बराबर होता है।

5) अपभाषा (Slang) :

'अपभाषा' भाषा का वह रूप है, जिसे परिनिष्ठित एवं शिष्ट भाषा की तुलना में विकृत या अपभ्रष्ट भाषा समझा जाता है। यह भाषा का एक ऐसा प्रयोग है, जो सामाजिक दृष्टि से उपयुक्त हो सकता है किंतु व्याकरण एवं आदर्श रूचि से गृहणीय नहीं होता। अत: अपभाषा में सामान्य भाषा द्वारा स्वीकृत आदर्शों की अवहेलना होती है। शब्दों का प्रयोग प्राय: अर्थापकर्षक मूलक होता है। शब्दों के निर्माण में किसी विधि का ध्यान नहीं रखा जाता। कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं - उसने मुझे धसा दिया, उसकी खूब मरम्मत की गई, कहो भाई खूब धूल चाटी आदि। वाक्य निर्माण में सिद्धांतो को नहीं अपनाया जाता। अत: अपभाषा शिष्ट वर्ग द्वारा स्वीकृत न होकर उसका प्रसार सीमित वर्ग समवयस्कों और श्रेणियों में ही सीमित रहता है।

वास्तव में देखा जाए तो अपभाषा में लोकमर्यादा की उपेक्षा के साथ शिष्टता का भी लोप रहता है। प्रयोक्ता का शैक्षिक तथा मानसिक स्तर का ज्ञान सहजता से समझा जा सकता है। इसके निर्माण के पीछे नवीनता, उच्छृंखलता और संस्कारहीनता हुआ करते है।

6) कूटभाषा / गुप्त भाषा (Code Language) :

भाषा द्वारा मानव अपना विचार दूसरों पर प्रदर्शित करता है। भाषा, अभिव्यक्ति का माध्यम रही है। सामान्य भाषा में बोधगम्यता होती है तो कूटभाषा में बाध्यता और गोपनीयता-दोनों ही होती है। अर्थात कुछ तो बताना अभिष्ट होता है और कुछ छिपाना। कूट-भाषा के मुख्य दो उद्देश्य है - 1) मनोरंजन 2) गोपन।

कविता (काव्य) में कूट भाषा का प्रयोग मनोरंजन के उद्देश्य से होता है। सूरदास के पदों में कूट-भाषा के कई उदाहरण मिलते हैं अनेक बार बालक या सयाने भी शब्दों को उलटकर बोलते है । जैसे बालक रोटी माँगते समय 'टीरो' कहकर या भात को 'तभा' या पानी को 'नीपा' कहकर अपना बौद्धिक उत्कर्ष दिखाना चाहते है।

कूटभाषा का दूसरा उद्देश्य है किसी वस्तु का गोपान, जरायम पेशा लोग, सेना, क्रांतिकारी, तश्कर व्यापारी, अपराधी, प्रेमी युवक-युवतियाँ आदि केवल अपने वर्ग के लोगों के साथ गुप्त संभाषण हेतु कूटभाषा का प्रयोग करते हैं। वह केवल अपनी बात छिपाने के उद्देश्य से ही कूट भाषा को समझनेवाले, या उन संकेतों से जो परिचित होते है वह तो उसका अर्थ समझ पाता है किंतु जो अपरिचित होते है उनके लिए वह संकेत (कूटभाषा) निरर्थक प्रमाणित होते है। कूटभाषा का प्रयोग करनेवाले लोग शब्दों का प्रयोग सामान्यत: स्वीकृत शब्दार्थों से अन्य अर्थों में करते हैं। यह नया अर्थारोप प्राय: अर्थादेश के रूप में होता है। शब्दों को तोड-मरोड कर ऐसा बना देते हैं जिनको दूसरे न समझ सके। उदा. परसाद दो (जहर दो), अमर करो (मार डालो), नारायण (नाले में चलो या नाले में हैं।) पैसा, पास हाने के लिए (अष्टी गरम होना), चोरी करने जाना (बारात जाना), जेल (ससुराल), दस खोका (दस लाख) आदि। स्पष्ट है कोष्टक में दिए गए वाक्य, शब्द कूट या गुप्त भाषा के है। जो प्रचलित अर्थ है उससे भिन्न अर्थ में इन शब्दों, वाक्यों का प्रयोग अभिप्रेत है। प्रेमी-युवक-युवतियाँ अक्षरों के बदले अंको का प्रयोग (कूट भाषा प्रयोग) करते हैं 'I Love you' के बदले (9,12,15,22,5, 25,15,21) अंग्रेजी A, B, C, D के क्रमांक के आधार पर गुप्त भाषा का प्रयोग करते हैं इसका एक मात्र उद्देश्य है अपने अभिप्राय को केवल उसी व्यक्ति को बताना जो आत्मीय हो।

अंकात्मक भाषा में अक्षरों की संख्या निश्चित कर ली जाती है। या लिपियों के मेल से नई लिपी तैयार करके भी काम चलाया जाता है।

कूटभाषा के प्रयोक्ता अपने काम के समय इस भाषा को प्रयुक्त करते है। इसके प्रयोग से अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ सामने आती है। यह काम चलाऊँ भाषा है। सब के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती।

7) कृत्रिम भाषा :

कृत्रिम भाषा और गुप्त भाषा (कूटभाषा) दोनों में भेद करना कठिन है। वस्तुत: गुप्तभाषा एक प्रकार से कृत्रिम भाषा का ही अंग है। कृत्रिम भाषा, भाषा के अन्य स्वाभाविक रूपों के विरूद्ध बनायी जाती है। कृत्रिम भाषा का अर्थ है गढ़ कर बनाया जाना। जो सामान्य भाषा से बिल्कुल पृथक होती है। संसार में भाषा की अधिकता के कारण अर्थात प्रत्येक देश और देश के हर प्रांत में अलग-अलग भाषाएँ प्रयोग में लायी जाती है। परिणामत: बोधगम्यता में बड़ी बाधा आती है। जब तक एक दूसरे की भाषा ज्ञात न हो तब तक परस्पर बात करना संभव नहीं है। इसको लेकर वाणिज्य, व्यवसाय, पर्यटन आदि में बहुत असुविधाएँ होती है। इन असुविधाओं को दूर कर अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए एक सामान्य भाषा प्रस्तुत करना ही कृत्रिम भाषा के अविष्कार का उद्देश्य है। अत: कृत्रिम भाषा को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा भी कह सकते हैं।

कृत्रिम भाषा के दो रूप किए जा सकते है - चोर, डाकू, क्रांतिकारी, प्रेमी युवक-युवतियाँ गुप्त भाषा के रूप में इसका प्रयोग करते हैं और सैनिक और बालचरों में इस प्रकार की भाषा आवश्यकता नुसार गढ़ी जाती है।

ऊपर कहा जा चुका है कि कृत्रिम भाषा, भाषा-भेद से उत्पन्न समस्याओं एवं बाधाओं को दूर करके अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए एक समान्य भाषा के रूप में बनायी गई है। कृत्रिम भाषा का उद्देश्य पवित्र होता है। व्यक्ति, समाज, देश या विश्व की आवश्यकताएँ इसमें प्रमुख होती है। गुप्त भाषा, कूटभाषा और कृत्रिमभाषा इनका उपयोग, प्रयोग करनेवाले अलग-अलग लोग हैं। कृत्रिम भाषा अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर स्वीकृत रहती है किन्तु गुप्त (कूट) भाषा नहीं। कृत्रिम भाषा का प्रयोग पूरे संसार में किया जा सकता है गुप्त भाषा का नहीं। कृत्रिम भाषा के शब्द, वाक्य सरलार्थी होते हैं। गुप्त / कूट भाषा के गोपनीय शब्द का, वाक्य का वास्तविक अर्थ अलग होता है और प्रयोगकर्ता अलग अर्थ में प्रयुक्त करता है। कृत्रिम भाषा में कुछ शब्द, कुछ संकेत, कुछ नियम बनाकर विचार-विनिमय का कार्य चलाया जाता है।

कृत्रिम भाषा, काम चलाऊ भाषा के रूप में कार्यरत होती है। यह विकास के गुणों से वंचित होती है इसीकारण इसमें साहित्यरचना संभव नहीं होती। गम्भीर विषयों का प्रतिपादन इसके द्‌वारा असंभव होता है। साथ ही यह भावात्मक प्रक्रिया को जन्म देने में असमर्थ होती है। कृत्रिम भाषा के रूप में एस्परेन्तो और हिंदुस्थानी दोनों के नाम सामने आए है।

एस्पिरेन्तों - समस्त विश्व में एकता स्थापित करने के उद्‌देश्य से बनायी गयी थी। विश्वभाषा के निर्माण का प्रश्न जब उठा था तब डॉ. जेमेन हॉल्फ (L. L. Zomenholf) के प्रयत्नों के फलस्वरूप 'एस्पिरेन्तो' का निर्माण किया

गया था। इसकी लिपि रोमन थी। पढ़ने-लिखने में सरल थी थोडे ही प्रयत्नों से भाषा का मर्मज्ञ बन सकता है। इसमें सोलह नियम ही व्याकरण था। इसमें साहित्य लेखन पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशन शुरू है मगर यह स्वाभाविक भाषा न होने से जीवित भाषा नहीं रही परिणामत: इसे भाषा का पद प्राप्त नहीं हो सका।

'हिन्दुस्थानी' के निर्माण का प्रयास स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में होता रहा। साहित्यिक हिंदी और साहित्यिक उर्दू के मिश्रण से हिन्दुस्तानी भाषा के नाम से बनायी थी। प्रयाग में 'हिन्दुस्तानी एकेडेमी' की स्थापना हुई थी। 'हिन्दुस्थानी' नामक त्रैमासिक पत्रिका भी निकाली गयी थी। सरकार के संरक्षण में इस कृत्रिम भाषा के चलाने के उपाय किए गए किंतु पाकिस्तान के निर्माण से सामयिक जरूरत समाप्त हो गई और यह कृत्रिम भाषा चल नहीं सकी।

कृत्रिम भाषा खुद जन्म नहीं लेती। उसे जन्म दिया जाता है वह स्वाभाविक नहीं होती। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ही उपयोग में आने से काम चलाऊ होती है।

8) अभिजात भाषा :

अभिजात भाषा, अभिजात वर्ग में प्रचलित होती है। ई. पूर्व 5 वी सदी में संस्कृत भाषा अभिजात वर्ग की भाषा थी। अर्थात अभिजात भाषा का प्रयोग केवल उच्च वर्ग के लोग करते थे। भारत में संस्कृत का प्रयोग उच्चवर्ग में रहने से जनसाधारण से यह काफी दूर रही। यदि इसी तरह अभिजात भाषा जन-सामान्य से दूर रही, उनके प्रयोग में नहीं आयी तो विकास से वंचित रह जाती है। यह भाषा सीमित, मर्यादित जन में ही उपयोग में लायी जाती है। इसे अंग्रेजी में 'क्लासिकल लैंग्वेज' कहते हैं। संस्कृत, लैटिन, और ग्रीक भाषाओं की गणना विश्व में अभिजात भाषाओं में की जाती है। स्त्री और पुरुष दोनों में स्त्री को निम्न वर्ग में माना जाने से अभिजात भाषा (संस्कृत) बोलने का अधिकार उच्च वर्गों की स्त्रियों को भी नहीं था। प्रथम शताब्दी के नाटककार भास के संस्कृत नाटकों में निम्न वर्ग के पुरुष और स्त्री पात्र प्राकृत बोलते हैं।

भाषा विचार विनिमय का साधन है। वह सामाजिक वस्तु है। ऐसी स्थिति में कोई भाषा विशिष्ट जाति वर्ग तक सीमित रही तो जनसाधारण से उसका रिश्ता ही नहीं रहता। अभिजात भाषा ऐसे ही दौर से गुजरती है और विशिष्ट वर्ग तक सीमित रहती है। वह वर्ग उसे अपने अधिकार में रखने का प्रयास करता है और उसे अपनी ही सम्पत्ति मान बैठता है। संस्कृत के अभिजात्य वर्ग ने इसे भी भारी क्षति पहुँचायी। ग्रीक और लैटिन भाषाएँ भी केवल मातृभाषाएँ, अपने प्रदेश की भाषाएँ बनकर रह गई।

9) मिश्रित भाषा :

मिश्रित भाषा अनेक भाषाओं के मेल से विकसित होती है। जहाँ अनेक भाषी व्यापारिक अथवा किसी प्रयोजन से लोग एकत्र होते हैं, एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं तो एक नई मिली जुली भाषा का जन्म होता है। इसे मिश्रित भाषा कहते हैं। बन्दर गाहों, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व रखनेवाली मंडियो तथा मार्केट (बाजार) में इस प्रकार की भाषाएँ देखी जा सकती है। चीन के कुछ महानगरों में बोली जानेवाली 'पिन्ज इंगलिश' (Pidgin English) इस प्रकार की भाषाओं का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। इस भाषा में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग अधिक किया जाता है। किन्तु इनका उच्चारण चीनी ढंग पर होता है। कोलकत्ता में बंगालियों द्‌वारा बोली जानेवाली हिंदी भाषा इसी प्रकार की है।

भूमध्य सागर के बन्दरगाहों में बोली जानेवाली सबीर भाषा में स्पेनी, इतालवी ग्रीक, अरबी और फ्रांसीसी भाषाओं का मिश्रण मिलता है।

मिश्रित भाषा ऐसे स्थल पर जन्म लेती है, जहाँ भिन्न भाषिक लोग व्यापार या व्यवसाय के बहाने एकत्र आकर काम करते हैं। तब सबकी भाषाओं के मेल से मिश्रित भाषा पनपने लगती है। इसमें किसी एक भाषा का व्याकरण नहीं होता। बहुत प्रकार के व्याकरणों की विशेषताएँ एकत्र दिखाई देती है। मिश्रित भाषा कामचलाऊं होती है, मगर इसका प्रयोग करनेवाला ही प्रयुक्त शब्दों का ज्ञाता होता है। प्राय: इसमें साहित्य नहीं लिखा जाता। यह केवल दैनिक व्यवहार में उपयोगी और उपयुक्त भाषा है।

उपर्युक्त भाषा के विविध रूपों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भाषा का उद्देश्य केवल अभिव्यंजन या विचार विनिमय ही नहीं गोपन भी है। विभिन्न दृष्टियों से उसके अनेक रूप हो जाते हैं। भाषा के उपर्युक्त रूपों के अलावा भी भेद हो सकते हैं। प्रादेशिक भाषा (राज्यभाषा), राज भाषा, राष्ट्र भाषा, अन्तर्राष्ट्रीय भाषा, व्यावसायिक भाषा, साहित्यिक भाषा माध्यम भाषा आदि। इसमें एक मौलिक तथ्य है कि सभी भाषाएँ मनुष्य के लिए उपयोगी सिद्ध होती है।

प्रादेशिक या राज्यभाषा का निर्माण भौगोलिक, ऐतिहासिक कारणों से होता है। भारत देश में अनेक प्रदेश या प्रांत है। उन प्रांतों की जो भाषाएँ हैं वे प्रादेशिक या राज्यभाषाएँ हैं। उदा. पंजाब की पंजाबी भाषा, असम की असमिया, महाराष्ट्र की मराठी आदि ये उन राज्यों की राज्यभाषाएँ भी है। भारत देश की शासन व्यवस्था दो भागों में विभाजित हैं केंद्रीय और प्रांतीय। प्रांतीय कामकाज के लिए प्रादेशिक या राज्यभाषा का प्रयोग होता है।

राजभाषा को राजाश्रय प्राप्त होता है। राजभाषा का निरूपण प्रांतीय एवं केंद्रीय सरकारों के साथ जुड़ा रहता है। भारत अनेक भाषा-भाषी देश है फिर भी सभी राज्यों तथा प्रदेशों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए हिंदी राजभाषा के रूप में स्वीकृत है। राजभाषा सदैव देश में शासनात्मक संगठन की भाषा है।

राष्ट्रभाषा – जब कोई भी राजभाषा राष्ट्र के भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के पारस्परिक विचार विनिमय का साधन बन जाती है तब वह राजभाषा न रहकर राष्ट्रभाषा बन जाती है। समूचे राष्ट्र में राजनीतिक अधिवेशनों, साहित्यिक गोष्टियों एवं सामाजिक समारोहों में राष्ट्रभाषा ही माध्यम बनती है।

अन्तर्राष्ट्रीय भाषा – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच व्यवहार करने के लिए प्रयुक्त भाषा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा कहलाती है। राष्ट्रों के पारस्परिक विचार-विनिमय के लिए अधिकतर राष्ट्रों में प्रचलित भाषा ही अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन सकती है। अंग्रेजी भाषा के साथ हिंदी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय रूप धारण करने लगी है।

व्यावसायिक भाषा – जितने प्रकार के व्यवसाय है उतने प्रकार की व्यावसायिक भाषाएँ हैं। इस भाषा के अन्तर्गत व्यवसाय के अनुरूप विशिष्ट शब्द या विशिष्ट भाषा प्रयोग दिखाई देते हैं। व्यवसाय या कार्य अनुसार भिन्न-भिन्न वर्गो की अलग अलग भाषाएँ बन जाती है। उदा. डॉक्टर की भाषा, ड्रायवर की भाषा आदि।

साहित्यिक भाषा – साहित्य के लिए प्रयोग में आनेवाली परिष्कृत भाषा को साहित्यिक भाषा कहते हैं। यह भाषा अलंकृत और कठिन होती है। साहित्यिक भाषा समाज के सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त नहीं होती। इसमें पारिभाषिक शब्दों की अधिकता होती है।

इस तरह हर भाषा की अपनी-अपनी प्रकृति होती है। इनमें न कोई सरल होती है और न कोई कठिन। भाषा का हर रूप समाज में प्राप्त होता है। किसी भाषा में दोष ढूँढ़ना आपके अभ्यास और संस्कार से सम्बद्ध है। जिस भाषा से हमारा करीबी संबंध है वह भाषा हमें आसान लगती है, सहज लगती है और परायी भाषा में हम दोष देखते हैं यहाँ भारतेन्दु का कथन सराहनीय है -

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा के मिटै न हिय को शूल॥

1.3 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

(क) उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1. कौनसी वाणी शिक्षित वर्ग की वाणी की प्रतिष्ठा प्राप्त करती है?
   अ) बोली ब) अपभाषा क) कूटभाषा ड) मानकभाषा
2. मानकभाषा के लिए 'टकसाली' शब्द प्रयोग किसने किया है?
   अ) भोलानाथ तिवारी ब) मंगलदेव शास्त्री क) श्यामसुंदर दास ड) पी. डी. गुणे
3. हिंदी भाषा क्षेत्र में कितनी उपभाषाएँ हैं?
   अ) चार ब) पाँच क) तीन ड) छह
4. 'खडीबोली' किस उपभाषा के अन्तर्गत आती है?
   अ) पश्चिमी हिंदी ब) राजस्थानी हिंदी क) पूर्वी हिंदी ड) बिहारी हिंदी
5. 'लोकल डायलेक्ट' (Local dialect) किसे कहते हैं?
   अ) अपभाषा ब) उपबोली क) बोली ड) उपभाषा
6. शिष्टभाषा की तुलना में भाषा का अपभ्रष्ट या विकृत रूप कौनसा है?
   अ) मिश्रितभाषा ब) कूटभाषा क)अपभाषा ड) अभिजातभाषा
7. 'एस्पिरेन्तो' विश्वभाषा के निर्माता है -
   अ) हॉकिट ब) याकोब्सन क) स्त्रुवा ड) जेमेन हाल्फ
8. व्यवसाय / व्यापार के बहाने इकट्ठे हुए लोगों में किस भाषा का जन्म होता है?
   अ) अपभाषा ब) कृत्रिमभाषा क) कूटभाषा ड) मिश्रितभाषा
9. जरायम पेशा लोग किस भाषा का प्रयोग करते है?
   अ) कृत्रिम ब) मिश्रित क) कूटभाषा ड) अपभाषा
10. निम्नलिखित कौनसी भाषा 'अभिजात' नहीं है?
   अ) संस्कृत ब) अंग्रेजी क) ग्रीक ड) लैटिन